वर्ण और जातिभेद।

आर्य और म्लेच्छ अर्थात् सभ्य और असभ्य इस प्रकार मोटे रूप मनुष्यों के दो भेद हैं, असभ्य वह जंगली मनुष्य हैं जो खेती करना आग जलाना रोटी पकाना और मकान बनाकर रहना नहीं जानते हैं, यह लोग पशुओं की भांति खाना पीना स्त्री संसर्ग आदि भोग तो सब ही प्रकार के करते हैं परन्तु अपने भोग और ज़रूरत की सामिग्री कुछ भी नहीं बना सक्ते हैं अर्थात् इन में भोग तो हैं परन्तु कर्म कुछ भी नहीं है, इसही कारण यह लोग प्रकृति के ही सहारे अपना जीवन निर्वाह करते हैं और नंगे रहकर और जंगल के फल फूल और पशुओं का कच्चा मांस खाकर ही अपना गुज़ारा करते हैं, अफ़रीका देश में ऐसे जंगली लोग अब भी रहते हैं जिन में से बहुतों को यूरुप के निर्दय लोग पकड़ पकड़ कर ले जाते थे और गुलाम बनाकर ढोर डंगर की तरह बेचते थे, परन्तु अमरीका में बिके हुए इन्हीं गुलामों को जब से अमरीका वालोंने गुलामीसे आज़ाद कर दिया है तबसे वह लोग शिक्षा पाकर ऐसे सभ्य और विद्वान् होगये हैं कि उन में से कोई २ तो अमरीका के प्रेसीडेन्ट अर्थात् महाराजा भी बन चुके हैं, और सबसे अधिक योग्यता दिखा चुके हैं और अफ़रीकामें रहने वालेमें से भी बहुतसे जंगली लोगों को अब दयावान युरोपियन लोगों ने सर्व प्रकारकी शिक्षा देकर सभ्य बना दिया है, और अधिक २ सभ्य बनाते चले जारहे हैं।

सभ्य वह लोग हैं जो रोटी कपड़ा मकान आदि बनाना जानते हैं अर्थात् जो प्रकृति के ही भरोसे पर नहीं रहते बलिक स्वयं भी कर्म करते हैं, और मनुष्य के सुख के वास्ते नवीन २ सामान निकालते हैं, प्राचीनकाल में इस हिन्दुस्तान में भी दोनों ही प्रकार के मनुष्य रहते थे जिन में असभ्य जंगली लोग तो काले थे और सभ्य लोग गोरे, इसही कारण हिन्दुस्तान के लोग दो वर्ण वा रंग के माने जाते थे इनमें से गोरों की सन्तान तो सबही नगर निवासी लोग हैं और कालों की सन्तान भील आदिक वह लोग हैं जो यद्यपि पहले की अपेक्षा बहुत कुछ तमीज़ सीख गये हैं परन्तु अब भी जंगलों में ही रहते हैं, और बहुधा शिकार मारकर ही अपना पेट पालते हैं, प्राचीनकाल में हिन्दुस्तान के सभ्य लोग आर्य और जंगल के रहने वाले असभ्य लोग म्लेच्छ कहलाते थे, आर्य लोग अपना एक संघ बनाये रखने और नियम बद्ध

कार्य करने के कारण बलवान थे और इन म्लेच्छों पर विजय पाने वाले थे और यह म्लेच्छ लोग पृथक् २ रहने और अंधाधुन्ध कार्य करने के कारण निर्बल और हारने वाले थे, इस कारण यह आर्य लोग इन म्लेच्छों को पकड़ लाकर अपना सेवक बना- लेते थे, और उनको अपने से हीन बिलकुल ढोर डंगरों की समान ही रखते थे, और किसी प्रकार भी अपने बराबर नहीं होने देते थे, परन्तु उनकी स्त्रियोंमें से जिसको अ- धिक सुन्दर समझते थे उसको अपनी स्त्री भी बना लेते थे, इस प्रकार नगरों में रहने वाले सभ्य लोग भी दो प्रकारके होगये एक उच्च वा श्रेष्ठ और दूसरे दास वा शूद्र, यह दास लोग उच्च जाति के आर्य्यों की सर्व प्रकार की सेवा करने के कारण यद्यपि सभ्यता के सबही कर्म सीख गये थे परन्तु उच्च जाति वाले आर्य्यों ने इनको मनुष्यों के बहुत ही कम अधिकार दिये, विशेष कर यह लोग पशुओं के ही समान रहने पाते थे, परन्तु इनकी बहुत सी सुन्दर स्त्रियों को सहज ही में अपनी स्त्री बना लेने के कारण आर्य पुरुषों में बहुत २ स्त्रियों के रखने और स्त्रियों को भी शूद्र के समान ही समझने और उनके अधिकार भी शूद्रों के से ही मानने की प्रथा भी चल गई और होते २ एक २ पुरुष सैकड़ों और हज़ारों स्त्रियों का रेवड़ इकट्ठा करने लगा और फिर होते २ इस विषय में ऐसी आपाधापी पड़ी कि जो ज्यादा स्त्रियाँ रक्खे वह ही अधिक प्रतिष्ठित माना जाने लगा, और स्त्रियों की ही छीन झपट और उनकी ही प्राप्ति के वास्ते आपस में लड़ाई और खून खराबा होने लगा।

आर्य लोग यद्यपि अपनी सभ्यता के प्रारम्भ से ही खेती, पशु पालन वाणिज्य व्यापार और कारीगरी आदि सब ही कार्य करते थे, और शिक्षा भी होती थी; परन्तु इन कामों के लिये इन में पृथक् २ मनुष्य बंटे हुवे नहीं थे बल्कि जिसको जिस कार्य की रुचि होती थी वह वही कार्य करने लग जाता था, परन्तु म्लेच्छों के नित्य के उपद्रवों और उनसे नित्य की लड़ाई रहने के कारण रक्षकों की अधिक क़दर होने लगी और होते २ रक्षा का काम करने वाले पूरी २ हुकूमत करने लगे । और अपनी २ प्रजा के मालिक बन बैठे, और होते २ उनके मरने पर उनकी सन्तान ही उनके पद की अधिकारी होने लगी, इस ही प्रकार शिक्षकों और पुजारियों की भी ज्यादा मान्यता होने पर वह भी अपने पद का अधिकारी अपनी सन्तान को ही बताने लगे, इस प्रकार रक्षक अर्थात् क्षत्री और शिक्षक अर्थात् ब्राह्मणों की अलग २ जाति होगई और आर्य लोग तीन भागों में विभाजित होगये अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्री, और सर्वसाधारण अर्थात् वैश्य, परन्तु इन तीनों में रोटी और बेटी व्यवहार बराबर जारी रहा, किन्तु चौथे प्रकार के लोग अर्थात् इनकी सेवा करने वाले शूद्र बराबर नीच ही

गिने जाते रहे और रोटी बेटी आदि किसी भी व्यवहार में वह समान न समझे गये। सिवाय इसके कि उनकी कन्याओं को व्याह लेने का अधिकार सब को ही रहा, फिर होते २ इन तीन उच्च जातियों में भी ब्राह्मण सब से श्रेष्ठ, क्षत्री उनसे कम और वैश्य उनसे भी कमतर होगये और सब को अपनी और अपने से कमतर जाति की ही कन्या के विवाहने का अधिकार रह गया, अपने से उच्च जाति की कन्या के विवाहने का अधिकार किसी को भी न रहा परन्तु खान पान इन तीनों का एकही रहा, फिर होते २ खान पान में भी यह भेद होगया कि सब कोई अपनी और अपने से ऊंची जाति का ही खाना खा सके अपने से कमतर का नहीं।

इस बीच में कुछ वैश्य लोग अधिक धनवान होगये और वह स्वयम् अपने हाथ से कार्य न करके अन्य ग़रीब वैश्यों से ही सर्व प्रकार की कारीगरी का कार्य कराने लगे और उनसे माल तय्यार करा करा कर ही बेचने लगे, फिर होते २ यह ग़रीब कारीगर लोग घटियाही समझे जाने लगे और वह भी आपस में एक दूसरे से खिंचने लगे और अन्त को इन लुहार, बढ़ई, सुनार, कुम्हार आदि कारीगरों की अलग अलग ही जातियां होगईं, फिर इन ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य इन तीनों के घरों में अनेक घटिया बढ़िया जाति की स्त्रियों के होने से उनकी सन्तान भी अपनी अपनी माता की तुच्छता और नीचता के अनुसार अपने को नीच उच्च मानने लगी और खैंचतान होकर उनकी भी अलग २ जातियां होने लगीं, और इस खैंचतान से देश की ऐसी प्रचंड अग्नि प्रज्वलित हुई कि प्रत्येक जाति ने आपस में खानपान भी छोड़ दिया। इस कारण अब अपनी अपनी जाति के सिवाय अन्य किसी भी जाति की कन्या विवाह लेने की प्रथा भी छूट गई और अपनी ही अपनी जाति में रोटी बेटी व्यवहार रह गया, फिर होते होते इस रोटी बेटी व्यवहार को इतनी अधिक मुख्यता दीगई और इसकी इतनी अधिक रक्षा होने लगी कि यदि कोई पुरुष अपने से भिन्न जाति के साथ रोटी बेटी व्यवहार करले तो वह सदा के वास्ते जाति से बाहर किया जावे, इस प्रकार जाति से बाहर होने वालों की भी अलग अलग जाति होने लगी फिर होते होते इस विषय में यहां तक खैंचतान हुई कि अपनी ही जाति के दूर देश के रहने वाले लोगों से भी रोटी बेटी व्यवहार न किया जावे क्योंकि कौन जाने उनमें क्या दोष हो, इसही कारण यदि कुछ लोगों को किसी कारण से अपना देश छोड़कर कहीं दूर जा बसना पड़ा तो उनकी जाति के लोगों ने भी उनके साथ रोटी बेटी व्यवहार नहीं किया बल्कि उनको अपने आपस में

ही रोटी बेटी व्यवहार रखना पड़ा, इस प्रकार होते होते अब हिन्दुओं की तीन हज़ार जाति इस हिन्दुस्तान में विद्यमान हैं जिनका अपनी ही अपनी जाति में रोटी बेटी व्यवहार है, अन्य किसी दूसरी जाति से कोई भी सम्बन्ध किसी प्रकार का नहीं है।

इन तीन हज़ार जातियोंके बीचमें रोटी बेटी व्यवहार न रहने के कारण आजकल २५ करोड़ हिन्दुओं का एक दल किसी प्रकार भी नहीं रहा है बल्कि दस दस पांच पांच हज़ार मनुष्यों के तीन हज़ार थोक होगये हैं, जिनको एक दूसरे से कोई भी सम्बन्ध नहीं है यहां तक कि प्रत्येक थोक के मनुष्य अपने थोक के दस पांच हज़ार मनुष्यों के सिवाय दुनियां भर के अन्य मनुष्यों को मनुष्य ही नहीं समझते हैं, इस ही कारण अपने थोक के मनुष्यों से भिन्न अन्य मनुष्यों से रोटी बेटी व्यवहार कर लेने को ऐसा महान अपराध मानते हैं जो किसी भारी प्रायश्चित्त से भी दूर नहीं हो सकता है और न कोई दंड देना ऐसे अपराधों के वास्ते काफ़ी हो सक्ता है, बल्कि यह ही समझ लिया जाता है कि ऐसे अपराध का अपराधी वास्तव में मनुष्य ही नहीं रहा है इस कारण उसको जाति से सदा के लिये बाहर निकाल देने के सिवाय और कोई उपाय ही नहीं रहता है।

अपनी ही जाति में रोटी बेटी व्यवहार होने और दूसरी जाति वालों के साथ रोटी बेटी व्यवहार करलेना इतना भारी पाप समझा जाने के कारण आजकल प्रत्येक जातिवालों का अपनी ही जाति वालों से इतना घना सम्बन्ध और दूसरी जातिवालों से इतनी अधिक पृथकता रहती है कि प्रत्येक जातिवाला अपनी जाति वालों की पक्ष करने के लिये झूठ फ़रेब बेईमानी और अन्याय करने को भी अनुचित नहीं समझता है, और अपनी जातिवालों के मुक़ाबिले में अन्य जाति वालों को तिनके की बराबर भी नहीं मानता और अपनी जातिवालों के फ़ायदे के वास्ते दूसरी जातिवालों के साथ सर्वप्रकार का अन्याय और ज़ुलम करने को भी बुरा नहीं जानता है, इसही कारण नित्यके व्यवहार में आजकल प्रत्येक मनुष्य के मुखमें यह ही शिकायत रहती है कि वह तहसीलदार कायस्थ है जो अपने कायस्थ भाई का ज़रूर पक्ष करैगा इस कारण कायस्थ के विरुद्ध मुकदमा करने में उससे न्याय की आशा नहीं हो सकती है, वह आदमी खतरी है इस कारण खतरी के साथ किसी झगड़े में हम उसको पंच नहीं बना सकते हैं क्योंकि वह तो अपने खतरी भाई की तरफ़ ही झुकेगा, यह पुरुष तो ब्राह्मण है इस वास्ते ब्राह्मण के मुक़ाबिले में हम उसको गवाह नहीं दे सक्ते हैं क्योंकि वह तो अपने ब्राह्मण भाईकी ही तरफ़की कहैगा, इस प्रकार हिन्दुओं की यह तीन हज़ार जाति नहीं हैं बल्कि पक्षपात और विरोध के तीन हजार झगड़े

था मरे मुर्दे भारतवर्ष की जलती हुई तीन हज़ार चिता हैं जो अपनी तेज़ लपटों से रहे सहे हिन्दुस्तान को भस्म कर रही हैं।

यदि हिन्दुओं की यह तीन हज़ार जातियां पृथक २ बसादी जावें और प्रत्येक जाति का अलग अलग राज्य होकर पृथक पृथक तीन हज़ार राज्य होजावें और एक जाति को दूसरी जाति से कुछ भी वास्ता न रहै तब तो शायद इतनी अशान्ति न हो परन्तु आजकल प्रत्येक नगर ग्राम में सबही जातियों के इकट्ठा वास करने में और आपस में सबही प्रकार का तअल्लुक पड़ते रहने से और इसही के साथ प्रत्येक मनुष्य का अपनी ही जातिवालों का उचित अनुचित पक्ष लेते रहने से तो बहुत ही ज्यादा गड़बड़ी फैल रही है और सर्व ही प्रकारके सांसारिक कार्यों में बाधा पड़कर भारी अशान्ति उपस्थित होरही है जो इस जातिभेद के रहते हुए किसी प्रकार भी दूर नहीं हो सक्ती है, संसार के सब ही लोगों को अपने से बहुत ही आगे निकला हुआ और अधिक अधिक उन्नति करता हुआ देखकर यद्यपि आजकल हिन्दुस्तान के लोगों ने भी उन्नति करने का शोर मचाना शुरू किया है परन्तु यह जाति भेद हिन्दुस्तानियों को उन्नति पथ पर आरूढ़ होने से रोकता है और एक इंच भी आगे बढ़ने नहीं देता है इस वास्ते निरा शोर ही शोर रह गया है, और जिससे इस उन्नति मार्ग का बिलकुल ही एक बच्चों वाला खेल तमाशा सा बनगया है और उसका एक प्रकार का स्वांग सा ही खेला जाने लगा है, चुनांचि इस उन्नतिका स्वांग बनानेके वास्ते ही प्रत्येक जाति ने अपने अलग अलग समाचार पत्र जारी कर दिये हैं, अलग अलग जातीय सभा वा कान्फरेन्स वा महासभा बनाली हैं और अलग अलगही अपने २ स्कूल और बोर्डिंग बना रहे हैं, परन्तु दस दस पांच पांच हज़ार मनुष्योंकी इन छोटी छोटी जातियों में यदि छोटे छोटे मासिकपत्र भी जारी होजावें और उनके दो दो चार चार सौ ग्राहक भी बन जावें तो बहुत ही बड़ी बात जानों इस ही वास्ते इन जातीय पत्रों को प्रतिवर्ष सौ दो सौ रुपये का घाटा अवश्य उठाना पड़ता है, जिसके कारण कोई टूटा फूटा मुफ्त का सम्पादक बनाकर और इधर उधर के दो चार सटर पटर लेख छापकर ही प्रत्येक जाति को अपना २ पत्र जारी रखना और इस प्रकार पांचों सवारों में अपना नाम लिखवाना पड़ रहा है, इसही प्रकार बरस भर में एकबार प्रत्येक जाति के दस पचास मनुष्य किसी स्थान पर इकट्ठे होकर और नाममात्र को दो चार प्रस्ताव पास करके कानफ्रेंस वा महासभा का भी नाम कर लेते हैं और इसही प्रकार अपने २ छोटे स्कूल और बोर्डिंग बनाकर भी प्रत्येक जातिने उन्नति की घुड़दौड़ में अपने को फसड्डी रहने से बचा लिया है।

ग़रज़ २५ करोड़ को उस महान शक्ति को जिसके द्वारा बड़े २ कालिज बड़ी २ यूनीवर्सिटियां और सब प्रकार की कलाकौशल सिखाने के बड़े २ कारखाने बन सक्ते थे और जिसके द्वारा हम भी इंग्लैंड, जर्मन, जापान और अमरीकावालों के मुक़ाबिले में अपनी विद्या और कलाकौशल की चतुराई दिखाकर मनुष्यों की गिनती में आसक्ते थे उस अति महान शक्ति को तोड़ फोड़कर और उसके तीन हज़ार टुकड़े करके इस जाति भेद ने हमको ऐसा निकम्मा और बेकार बना दिया है कि हम मनुष्यों की गणना में भी आने के योग्य नहीं रहे हैं और आपस में लड़ झगड़ कर अपने को बरबाद करने के सिवाय अब हम को और कुछ कार्य ही नहीं रहा है। फल इसका यह हुआ है कि संसारके जिन मनुष्यों में जाति भेद नहीं है जो मनुष्यमात्र की एक जाति समझते हैं और कम से कम अपने देश वासियों को तो एकही जानते और मानते हैं वह तो उन्नति की घुड़दौड़ में आगे बढ़े चले जारहे हैं और हमारे शिरोमणि बने हुए हैं और जाति भेद वाले उनके घोड़े को घास डालने और उनकी जूतियां सीधी करने के योग्य भी नहीं हैं और दिन २ नीचे को ही गिरते चले जारहे हैं।

इस अभागे हिन्दुस्तान में जातिभेद का यह अड़ंगा केवल रोटी बेटी व्यवहार के वास्ते नहीं है बल्कि धर्म में भी इसका प्रवेश होगया है अर्थात् ज़बरदस्त लोगों ने आत्म कल्याण सम्बन्धी धर्म के ऊंचे दर्जे के बहुत से साधनों के करने में अधिकार भी अपने ही को ठहरा लिया है और निर्बलों को उससे बिलकुल ही वंचित कर दिया है फिर होते होते यहाँ तक मान लिया है कि मानो नीबू नारंगी और आम्र अमरूद आदि वृक्षों वा चील कबूतर और तोता मैना आदि जीवों की तरह प्रत्येक जाति के मनुष्यों की प्रकृति ही अलग २ है इस कारण जिस प्रकार कबूतर तोता नहीं बन सकता वा नारंगी के वृक्ष पर अमरूद का फल नहीं आसक्ता वा जिस प्रकार कोई स्त्री पुरुष नहीं बन सक्ती वा कोई पुरुष स्त्री नहीं बन सक्ता इसी प्रकार एक जाति का मनुष्य दूसरी जाति का कार्य नहीं कर सक्ता इस कारण जो जाति नीच है वह सदा के लिये नीची ही रहेगी और जो उच्च है वह उच्च ही बनी रहेगी लाखों करोड़ों पीढ़ी के बीत जाने पर भी उनकी सन्तान में फ़रक़ नहीं आसकेगा और वह दूसरी जातिका कार्य करने के योग्य ही नहीं होसकेगा फल इस अनोखे सिद्धान्त का यह हुआ है कि नीची जाति वालों को तो धर्म के ऊंचे कार्य करने नहीं दिये हैं और ऊंची जाति वालों को ऊंचे कार्य करके अपना ऊंचा पद क़ायम रखने की ज़रूरत नहीं रही है। बल्कि उनको पूरी २ बेफ़िकरी इस बात की होगई है कि अत्यंत नीच से नीच कार्य करते हुये भी वह उच्चही बने रहेंगे और नीची जाति वाले उत्तम से उत्तम कार्य करने पर

भी उच्च नहीं होसकेंगे, इस कारण ऊंची जाति वालों का चाल चलन बहुत ही नीचे गिर गया है और नीची जाति वालों को अपना चाल चलन उत्तम बनाने का उत्साह नहीं रहा है।

मनुष्य जो भी चाहे गड़बड़ करे परन्तु प्रकृति में कोई गड़बड़ नहीं होसक्ती है; कारण और कार्य के अटल नियम में कोई फ़रक नहीं आसक्ता है अर्थात् जैसा कारण जुड़ैगा कार्य भी उसही के अनुसार होगा, इसकारण हिन्दुस्तान के इस अनोखे जातिभेद ने जब घोर अंधकार फैलाया, जब सैकड़ों और हज़ारों स्त्रियों का रेवड़ इकट्ठा करनेवाले और उनको ढोर डंगरों की तरह रखनेवाले ही बढ़िया कहलाये जब दूसरों की सुंदर कन्याओं को छीन लेने पराई स्त्री को उड़ालाने और स्वयम्बर जैसे पवित्र मार्ग को भी भ्रष्ट करके उसमें भी ज़बरदस्ती करने और लड़ाई दंगा मचाने में ही बहादुरों की बहादुरी और क्षत्रियत्व रह गया और स्त्रियों का रेवड़ इकट्ठा करने की लालसा में ही राजाओं की चतुरंग सेना का घमसान होनेलगा और जब यहाँ तक अन्याय फैलगया कि उच्च जातिवाले कन्या के पैदा होते ही उसका गला घोट देने में ही अपनी बड़ाई समझने लगे और जब यहां तक पाप व्यापा कि स्त्रियाँ तो अपने पति के मरने पर उसके साथ जिन्दा ही जल मरें वा सदा के लिये वैधव्य दीक्षा लेलें और पुरुष अपनी सैकड़ों स्त्रियों के मर जाने और सैकड़ों स्त्रियों के विद्यमान रहते हुये भी और सत्तर सत्तर वर्ष का बुड्ढा होजाने पर भी दस दस वर्ष की कन्या को ब्याह लावें और खुल्लमखुल्ला रन्डीबाज़ी आदि महा कुकर्म करते हुये भी ऊंच ही बने रहें तब इस का यह परिणाम तो होना ही था कि भिन्न देश के लोग आकर इस देश की रक्षा करें और हमको आदमी बनाने की शिक्षा देवें उच्च सन्तान सदा के लिये उच्च और नीच की सन्तान सदाके लिये नीच ही रहेगी यह ही नहीं बल्कि क्षत्री की सन्तान ही सदा रक्षक बन सकेगी और ब्राह्मण की सन्तान ही सदा ब्राह्मण का कार्य कर सके गी इस प्रकार का अनोखा सिद्धान्त मननेवालों को ज़रा आंख खोल कर देखना चाहिये कि कुदरत ने तुम्हारे समझाने और तुम्हारी अक़ल को ठिकाने पर लाने के वास्ते कैसा साक्षात उदाहरण तुम्हारे सामने उपस्थित किया था अर्थात् जब तुमने अपनी जाति के घमंड में आकर मनुष्य को मानना और मनुष्योचित् कार्य करके ही अपने को मनुष्य बनाये रखने का ख़्याल छोड़ दिया बल्कि राक्षसी वृत्ति करते हुए भी अपने को आर्य और उच्च जातिवाले और सर्वाधिकारी मानने लगे तब वह मुसलमान लोग काफ़र तुम्हारे स्वामी बने जिन को तुम म्लेछ कहते थे और शूद्रों जैसा भी नहीं मानते थे, नतीजा जिसका यह हुआ कि बड़े २ तिलकधारी ब्राह्मणों और धर्म के

ठेकेदारों ने उनके आगे मस्तक नवाया और उनकेही गुणानुवाद गाने में अपनी प्रतिष्ठा समझी इसही प्रकार आपके व.के राजपूतों और उच्चजाति के क्षत्रियों ने भी उनही की अर्दली में खड़े रहने को अपना अहोभाग्य समझा और उनको अपनी कन्याओं के डोले देकर अपने को कृतकृत्य माना।

हा! इतना भारी दंड मिलने और ऐसा स्पष्ट उदाहरण मिलने पर भी हिन्दुस्तानियों की आंखें न खुलीं और इतना नीचे गिर पड़ने पर भी उनको यह होश न आया कि मनुष्य मनुष्य सब एक हैं इनमें जो जैसी योग्यता प्राप्त करता है वह वैसा ही अधिकारी होजाता है। अर्थात् अपनी २ योग्यता के अनुसार उच्च की सन्तान नीच और नीच की सन्तान उच्च बनती रहती है और इसही प्रकार योग्यता प्राप्त करने वा उस को खो देने से आर्य से म्लेच्छ और म्लेच्छ से आर्य बनते रहते हैं। बल्कि इस अभागे हिन्दुस्तानके लोगोंने तो इस महान परिवर्तनसे कुछ भी पाठ न सीखा और आसमानसे धरती पर पटके जाने पर भी और अवनति के गहरे गड्ढे में ढकेल दिये जाने पर भी यह ही कहे चले जारहे हैं। कि हम उच्च हैं, और अपनी उच्चता क़ायम रखने के वास्ते हम को किसी योग्यता प्राप्त करने की ज़रूरत नहीं है बल्कि उच्चकी सन्तान होना ही हमारे उच्च होने के वास्ते काफ़ी है।

अच्छा भाई उच्च जातिवालों और कुछ नहीं तो तुम्हारे इस ढीठपने की तो प्रशंसा ही की जाती है और तुमसे फिर प्रार्थना की जाती है कि ज़रा प्रकृति की तरफ़ देखो जिसने तुमको होश में लानेके वास्ते पहिले से भी बढ़िया उदाहरण उपस्थित कर दिया है अर्थात् जिन शास्त्रों को छूनेके अधिकारी भी तुम म्लेच्छों और शूद्रोंको नहीं समझते थे और क्षत्रियों और वैश्यों को भी जिन शास्त्रों को नहीं पढ़ने देते थे और एकमात्र ब्राह्मणों को ही जिनका अधिकारी समझते थे वह आजकल जर्मनी आदिक उन ही देशों में मिलते हैं। जिन को तुम किसी समय म्लेच्छ देश कहते थे और वह ही लोग उनके अर्थों को समझते हैं। और यदि तुम लोगों को उन शास्त्रों की ज़रूरत होती है तो उनही देशों से मंगाने की कोशिश करते हो इसही कारण हिन्दुओं के पवित्र वेद भगवान को प्रकाशित करनेके वास्ते जब स्वामी दयानन्द ने बीड़ा उठाया था तो उनको उसकी शुद्ध और पूर्ण प्रति इस हिन्दुस्तान से प्राप्त न हो सकी थी और अन्त को जर्मनी से ही मंगानी पड़ी थी और यह बात केवल हिन्दुओं के ही ग्रंथों की बाबत नहीं है। बल्कि भगवान समन्त भद्राचार्य रचित जैनियों के सबसे महान ग्रन्थ गन्धहस्त महाभाष्य का पता भी अब जर्मन में ही लगा है जिसकी प्रति लाने के वास्ते कई जैन विद्वान जर्मन जानेवाले हैं और जिसके दर्शन मात्र करा देने वाले को सेठ माणकचंद

जी साहब बम्बई निवासी एक हज़ार रुपया इनाम देने को तैयार थे और जिसकी तलाश में श्रीमान पं० पन्नालालजी बाकलीवाल ने बर्षों गंवा दिये और अनेक भंडार ढंढोल डाले परन्तु कुछ भी पता न चला।

यह ही नहीं बल्कि प्रकृति ने यह भी करके दिखा दिया है कि बनारस के संस्कृत कालिज के अधिष्ठाता (Principol) भी बहुधा कर युरोपियन विद्वान् ही नियत हैं। कलकत्ता यूनीवर्सिटी में संस्कृत के अलंकारादि शास्त्र पढ़ानेके वास्ते भी वह ही अधिक योग्य निकले और श्रुतिस्मृति और पुराण आदि धर्मशास्त्रों और छंद अलंकार व्याकरण और न्याय आदि विद्याओं और प्राचीन ग्रन्थों से हिन्दुस्तान की प्राचीन बातों की जांच में भी इन युरोपियन लोगों के ही अनुवाद और इनही की खोज अति उपयोगी हो, यह बात केवल हिन्दू ग्रन्थों के विषय में नहीं है बल्कि जैनी भी अपने प्राकृत ग्रन्थ शुद्ध करानेके वास्ते यूरुप का ही आश्रय लेने लगे हैं और इनके इतिहास का पता भी इन युरोपियन विद्वानों की खोज से ही मिलता है चुनांचि श्रीमान् पं० नाथूराम जी प्रेमी सम्पादक जैन हितैषी ने प्राचीन आचार्यों और उनके ग्रन्थ निर्माण का जो कुछ भी इतिहास जैनहितैषी के द्वारा प्रकाशित करके जैन संसार को चकित किया है उसकी अधिक सामिग्री उनको अंग्रेजों की ही खोज से मिली है।

इस प्रकार आजकल ब्राह्मणों और धर्म के अन्य ठेकेदारों का ही अधिकार चकनाचूर नहीं हुआ है बल्कि क्षत्रियों और वैश्यों अर्थात् अन्य उच्च जातियों का भी स्वामित्व नहीं रहा है बल्कि अब राजकीय पदों पर वह ही लोग नहीं बिठाये जाते हैं जिनके बाप दादा क्षत्री थे और जिनके पूर्वजों ने मुसलमान राजाओं को अपनी कन्याओं के डोले देकर बड़े बड़े पद प्राप्त करलिये थे बल्कि अब योग्यता पर ही राजकीय पद मिलते हैं और कोई हिन्दू हो वा मुसलमान आर्य हो वा म्लेच्छ उच्च जाति का हो वा नीच का, जो कोई भी उच्च पद पाने की योग्यता प्राप्त करलेता है उसही को वह पद मिल जाता है और उसही के सामने ब्राह्मण आदि उच्च जाति के आदमी हाथ जोड़कर खड़े होते हैं और न्याय और रक्षा की प्रार्थना करते हैं यह ही नहीं बल्कि बहुतसे ब्राह्मण और अन्य उच्च जातिके लोग उस अर्दली के चपरासी बनकर और उसके नाम की चपरास बांधकर खड़े २ उस पर चंवर ढोरते हैं और चलते समय उसके आगे २ दौड़कर हटो बचो की आवाज़ लगाते हैं और उसका दास बनने में अपना अहोभाग्य मानते हैं, इतना ही नहीं बल्कि इस जर्मन के महायुद्ध में तो भंगी और चमारों ने भी फौज के सिपाही बनकर अपने उच्च जाति के क्षत्रियों के साथ साथ ही क्षत्रीपने के जौहर दिखाये हैं और चमकते हुए सूरज की तरह सिद्ध कर दिया है

कि मनुष्य मात्र एक हैं और सब ही मनुष्य सबही मनुष्यों का कार्य करसक्ते हैं, वर्ण और जाति का अड़ंगा प्राकृतिक नहीं है बल्कि बिलकुल ही काल्पनिक और मिथ्या है,

इस प्रकार कुदरत ने ब्राह्मणों और क्षत्रियों का ही घमंड नहीं तोड़ा है बल्कि वैश्यों को भी बिलकुल नीचा दिखा दिया है और उनके इस जाति घमंड को तोड़ने के वास्ते कि हमही और हमारी सन्तान ही व्यापार के अधिकारी हैं कुदरत ने उनसे बड़े बड़े सब व्यापार छीन लिये हैं और जहाजों में भर भर कर एक देश से दूसरे देश को माल लाने लेजाने का कार्य तो बिलकुल ही उनके हाथ से छीन लिया है और उनको बिलकुल ही इस कार्य के अयोग्य सिद्ध कर दिया है, यह ही नहीं बल्कि हिन्दुस्तान देशके अन्दर का भी अनेक प्रकार का व्यापार उनके हाथ से ले लिया है और वह अब छोटे २ दल्लाल वा नून तेल के बेचने वाले छोटे छोटे हटवे ही रह गये हैं और बड़े २ सब व्यापार उन लोगों के अधिकार में पहुंच गया है जिनको यह लोग अनधिकारी बताकर घृणा की दृष्टि से देखते थे।

वैश्यों ने घमंड में आकर उन गरीब वैश्यों को भी जो कारीगरी करते थे तुच्छ समझा था और उनको नीचे ढकेलते २ शूद्रों में ही मिला दिया था, फल जिसका यह हुआ कि हिन्दुस्तान की सब कारीगरी नष्ट भ्रष्ट होगई और यहां से जो अनेक कारीगरी की वस्तुयें अन्य देशों को जाती थीं उनका जाना बन्द होगया और धनाढ्य वैश्यों को भी व्यापार के लिये माल न मिलने से हाथ पर हाथ धरकर बैठना पड़ा बल्कि उलटा अन्य देशों के व्यापारी ही अपने देश की अनेक कारीगरी की वस्तु यहां लाकर बेचने लगे और यहां का धन खैंच २ कर अपने देश में लेजाने लगे, और हिन्दुस्तान बिलकुल ही एक महा कंगाल देश होगया और दूसरे देशों की बनाई हुई चीजों का ऐसा मुहताज होगया, कि बाहर देशों से बनी बनाई वस्तुओं के आये बिना इसका जीवन निर्वाह भी मुश्किल होगया है इस बातका सबसे मोटा दृष्टान्त जर्मनी के इस महायुद्ध ने दिखा दिया है, जिस में यद्यपि सर्वथा ही बाहर से वस्तु आनी बन्द नहीं हुई थी, बल्कि कुछ रुकावटही होगई थी तो भी सब वस्तुओंके चौगुने दाम होगये और हिन्दुस्तान के सब लोग ही त्राह त्राह करने लगे, और यदि बाहर से वस्तु आनी सर्वथा ही बन्द होजाती तब तो शायद इनका जीना ही भारी होजाता और यदि जीते भी रहते तो इनको बिलकुल पशुओं के समान ही जीना पड़ता, इस प्रकार प्रकृतिने सिद्ध कर दिया है कि कारीगरों की बदौलत ही यह मनुष्य मकान बनाकर कपडे पहन कर व मिट्टी और तांबे पीतल के बर्तनों में रोटी बनाकर और अन्य भी सर्व प्रकार का सामान रखकर मनुष्य बना है नहीं तो अर्थात् यदि कारीगर लोग अनेक प्रकार की

वस्तु न बनावें तो यह वैसा ही नंगा बूचा पशु है जैसा कि जंगलके अन्य जानवर इस कारण कारीगरी और कारीगरों की प्रतिष्ठा करना बहुत ही ज़रूरी और मनुष्य बनाने के लिये अति ही आवश्यक है इसके अलावा कारीगरी और कारीगरोंकी प्रतिष्ठा और पूजा करनेवाले देशों को मालामाल और हमारे स्वामी बनाकर प्रकृति ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य के लिये जो कुछ है वह कारीगरी ही है और सबसे उच्च जाति कारीगरों की ही है।

परन्तु यह सब कुछ होने पर भी हम वही के वही हैं और ज़रा भी इधर उधर नहीं हिले हैं। मानो हम बिल्कुल ही निर्जीव होगये हैं, और यह सब दृष्टान्त हमारे ऊपर कुछ भी असर नहीं कर सके हैं, हम अब भी अपनी उच्च जाति की डींग मारते रहते हैं और अपने को बड़ा समझ कर मन ही मन खुश होते रहते हैं, और अपने से अधिक बलवान, अधिक धनवान, अधिक विद्यावान, और अपने से अधिक सदाचारी और सभ्य मनुष्यों को भी घृणा की दृष्टि से देखते रहते हैं, और इन को अपने से नीच समझ कर अपनेही मुंह मियां मिट्ठू बनते रहते हैं।

जातिभेद का अडंगा लगानेवाले ब्राह्मणों ने अपनी पूजा स्थिर रखने के वास्ते किसी समय में हिन्दुस्तान के भोले लोगों को यहां तक डराया था कि यदि छोटी जाति का कोई मनुष्य कोई बड़ा कार्य करले तो वह ऐसा महा अन्याय का कार्य है कि उसके कारण सबही लोगों पर आसमानी ग़ज़ब टूट पड़ता है, चुनांचि बाल्मीक रामायण में लिखा है कि एक ब्राह्मण का जवान बालक मर गया, वह ब्राह्मण अपने उस बालक को श्रीरामचन्द्रजी के पास लेकर आया और कहा कि आप के राज्य में ऐसा आप के सामने नहीं मर सक्ता है, अब अवश्य ही कोई पुरुष कोई कार्य मर्यादा के विरुद्ध कर रहा है, जिससे मेरा बालक मरा है और मेरा ही बालक क्या, यदि किसी का भी कोई मर्यादा विरुद्ध कार्य होता रहा तो आपकी सारी ही प्रजा पर गज़ब पडैगा इस पर रामचन्द्रजी ने अपने सारे राज्यमें ढूंढकराई कि कौन मर्यादा विरुद्ध कार्य कर रहा है, तब बड़ी मुश्किल से मालूम हुआ कि एक शूद्र महान तपश्चरण कर रहा है। और शीघ्र ही उसको स्वर्ग मिलनेवाला है। यह मालुम होते ही रामचन्द्रजी ने झट अपनी तलवार से उसका सिर काट दिया और ऐसा होने से उस ब्राह्मण का बालक जी उठा और अन्य प्रजा भी निर्भय होगई।

जहां पर जाति भेद की ऐसी भयानक शिक्षा दी जाती हो और ऐसी डरावनी कहानियां सुनाई जाती हों वहां खैर कहां, ऐसे क्षुद्र हृदय निर्दय लोग यदि गुलाम न बनें तो और कौन गुलाम बनने के योग्य होसक्ता है, गुलाम ही नहीं बल्कि ऐसे लोग

तो ढोर डंगरों के समान खूंटे से बांधे जाने और लाठी वा चाबुकों के ही लायक हैं और ऐसा ही इनके साथ व्यवहार हुआ भी है, वल्कि महमूद गज़नवी आदि मुसलमान बादशाह तो ब्राह्मण क्षत्री आदि उच्च जातियों के लाखों स्त्री पुरुषों को यहां से पकड़ कर लेगये हैं और अपने देश में जाकर भेड़ बकरी की तरह इनको दो दो रुपयेको बेचा है और खरीदनेवालों ने इनको भेड़ वकरी और कुत्ता बिल्ली की ही तरह रक्खा है सच है जो दूसरों के लिये कूआ खोदता है वह स्वयम् कूए में गिरता है जो दूसरोंको तुच्छ समझता है, वह स्वयम् ही तुच्छ बन जाता है, जैसी करनी वैसी भरनी का सिद्धान्त प्रसिद्ध ही है।

कमज़ोर मनुष्यों को ज़बरदस्त मनुष्यों के महा अन्याय से बचाने अर्थात् गुलामी की प्रथा को दूर करने और सब ही मनुष्यों को पूरी स्वतंत्रता और सर्व प्रकार का हक़ देने के लिये प्राचीन काल में जैनियों और बौद्धों ने बड़ी भारी कोशिश की है। और मनुष्यमात्र को एक समान मानने और सब के साथ रोटी बेटी व्यवहार जारी करने की बहुत कुछ शिक्षा दी है। और विशेष कर बुद्ध महाराज ने तो जहां तक होसका है। छोटी ही जातिवालों का भोजन ग्रहण किया है। जिससे लोगों के हृदय से यह झूठी ग्लानी हटे और बहुत जल्द यह राक्षसी प्रथा टूटे उनही दिनों में जैन धर्म के तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी ने अपने समवसरण में चांडालों और अस्पर्श शूद्रों और सूवर कुत्ता आदि महा हिंसक और महान अपवित्र पशुओं को भी जगह देकर और सबही को अपनी कल्याणमय वाणी सुनाकर यहां तक सिद्ध कर दिया है कि धर्म का द्वार तो सबही मनुष्यों सर्व ही जीव जन्तुओं के वास्ते भी खुला हुआ है। किसी को किसी प्रकार की रोक टोक नहीं है। और न हो सक्ती है। पाले ऊंचे से ऊंचे धर्म को जितना जिस किसी से पल सके और चढ़े ऊंचे से ऊंची सीढ़ी पर जितना जिस किसी से बन पड़े, धर्म जीवों के कल्याण के वास्ते होता है। न कि उनको कल्याण के मार्ग पर जाने से रोकनेके लिये, इस कारण जो धर्म किसी जाति के मनुष्यों के वास्ते तो कल्याण का मार्ग खुला रखता है। और किसी २ जाति के वास्ते उस मार्ग को बन्द करता है। वह धर्म नहीं है वलिक द्वेष का भंडा है और कल्याण का मार्ग नहीं है, वल्कि संसार के लोगों को फूक डालने के वास्ते आग की चिंगारी है।

जैनाचार्यों ने भी जहां तक उनसे बना है लोक में फैले हुए जाति भेद को तोड़ा है। और गांव के गांव को जैनी बनाकर उस गांव की ऊंच नीच सब ही जाति के लोगों को एक बिरादरी बना दिया है और उनका खानपान और रोटी बेटी सब

एक कर दिया है और धर्म के मामले में तो किसी भी जीव को किसी प्रकार की रोक टोक न रहने के वास्ते ऐसी २ कथायें लिख दी हैं। कि एक शेर जो किसी पशु को मार कर उसका माँस खा रहा था और जिसका मुंह खून से भरा हुआ था उसको मुनि महाराज ने उपदेश दिया और उसने अपने मुखका माँस थूककर व्रत ग्रहण किये एक चाँडाल की लड़की जिसको ज्यादा कोढ़ होरहा था कि उसके शरीर को दुर्गंध से दूर २ तक के जीव दुखी होरहे थे, जो विष्टा की कूड़ी पर बैठी हुई थी उसको वहीं उस के पास जाकर मुनि महाराज ने उपदेश दिया और धर्मात्मा बनाया -इसही सिद्धान्त को बिल्कुल स्पष्ट कर देने के वास्ते श्रीसमन्त भद्र स्वामी ने रत्नकरंड श्रावकाचार में लिखा है कि चांडाल की सन्तान भी यदि सम्यक्ती हो जावे तो वह भी देवता की तरह पूजने योग्य है। क्योंकि धर्म के प्रभाव से कुत्ता भी देव होजाता है। और पापके प्रभाव से स्वर्ग का देव भी कुत्ता होजाता है। (देखो श्लोक २८ २९)

विचारने की बात है कि चाहे कोई ब्राह्मणकी सन्तान हो चाहे चांडाल की, शरीर दोनों का ही हाड़ मांस आदि अपवित्र और घिनावनी वस्तुओं का बना हुआ होगा, ब्राह्मण के शरीर के भी सबही परमाणु अपवित्र हैं। और चांडाल के भी इस लिये शरीर के सबब इनमें नीच वा उच्चपना नहीं होसक्ता है, हां इनमें से जिसका भी आत्मा मिथ्यात्व के कारण अशुद्ध होरहा है, वह ही अपवित्र और नीच है, और जिस का आत्मा सम्यक्तके कारण विशुद्ध हो रहा है, वही पवित्र और उत्तम है, चाहे वह किसी ही वर्ण और किसी ही जाति का क्यों न हो, इस प्रकार जैन धर्म ने डंके की चोट से आत्म कल्याण का मार्ग सबही जीवों के वास्ते खोल दिया था, और स्वार्थी मनुष्यों की डाली हुई रुकावटों को एकदम दूर कर दिया था, परन्तु हिन्दुस्तान के अभाग्य से कुछ ही समय पीछे इस हिन्दुस्तान में ऐसे हिन्दू राजाओं का राज्य होगया, जिन्होंने ज़बरदस्ती तलवार के ज़ोर से हिन्दूधर्म को फैलाया और बोद्धों को सर्व प्रकार का कष्ट पहुंचाया, और इन लोगों से इतनी अधिक घृणा करी कि इनका कपड़ा छू जाने पर भी सचैल स्नान किया अर्थात् स्वयम् भी नहाये और अपने कपड़े भी धोये, इस प्रकार जैनियों और बौद्धों का हिन्दुओं के तालाब व कूए से पानी भरना और बाज़ार में स्वतंत्रता के साथ विचरना भी बन्द होगया जिससे यह लोग यहां तक तंग आये कि बौद्धों को तो सर्वथा ही इस हिन्दुस्तान को छोड़ देना पड़ा और ब्रह्मा लंका तिब्बत और चीन आदि आस पास के देशों में चला जाना पड़ा जहां जाकर उन्होंने अपना बौद्ध धर्म फैलाया और अपने को दुनिया भर की सबही जातियों से अधिक बढ़ाया, चुनान्चि इस समय कुल पृथिवीपर ५५ करोड़ बौद्ध ३२ करोड़ ईसाई २५ करोड़ हिन्दू १६ करोड़ मुसलमान और केवल १२ लाख जैनी हैं।

इस प्रकार बोद्धों ने तो हिन्दुस्तान को छोड़ देना पसन्द किया परन्तु किसी के दबाव में आकर अपने स्वतन्त्र सिद्धान्तों को रंचमात्र भी नहीं बदला और उनकी इसही दृढ़ता का यह परिणाम है कि आज दिन वह संसार भर की सब ही जातियों से अधिक हैं परन्तु जैनियोंको इतना साहस न हुआ इस कारण उन्होंने कमज़ोर नीति का सहारा पकड़ा अर्थात् उन्होंने हिन्दुओं की जाति पांति के नियम को फिरसे स्वीकार कर लिया और ब्राह्मणों को भी उसही प्रकार पूजने और शूद्रों को उसही घृणा की दृष्टि से देखने लगे जिस प्रकार कि हिन्दू करते हैं. यह ही नहीं बल्कि इन्होंने हिन्दू धर्म के सबही प्रकार के संस्कारों को भी ग्रहण किया, उनके अनेक सिद्धान्तों को भी क़बूल किया उनके जादू मन्त्र यन्त्र तन्त्र भी स्वीकार किये, उनके अनेक देवी देवताओं को भी पूजना प्रारम्भ किया, और पूजने की विधि भी उन की ही अंगीकार की और यहांतक उनका रूप बनाया कि उनकी कथा कहानियों को भी अपनाया, जैनियों ने यह सब कुछ किया तौ भी हिन्दूओं ने इनको नागरिक के अधिकार नहीं दिये और इनको प्रतिष्ठा की दृष्टि से नहीं देखा इसही कारण इनको अपने धर्म उत्सव आदि निकालने और खुल्लम खुल्ला धर्म साधन करने की स्वतन्त्रता नहीं मिली और इनको अपनी सर्व धर्म क्रियायें छिप २ कर ही करनी पड़ीं, इस प्रकार जैन धर्म में से उसका असली महत्व निकल जाने और उस पर हिन्दू धर्म का पूरा २ रूप चढ़ जानेसे जैनी लोग जैन धर्म को छोड़ २ हिन्दू बन जाने लगे और जैनियों की गिनती में इतनी कमी आने लगी जो इस समय साक्षात दिखाई दे रही है अर्थात् ३० करोड़ हिन्दुस्तानियों में केवल १२ लाख ही जैनी नज़र आ रहे हैं।

जिस समय हिन्दुओं का यह अन्याय शुरू हुआ था उस से पहले जैन धर्म के दो सम्प्रदाय दिगम्बर और स्वेताम्बर होचुके थे और शायद इनके इस प्रकार दो टुकड़े होजानेके कारण ही इनमें इतनी कमजोरी आगई थी कि यह लोग बौद्धों की तरह से साहस न कर सके और अपने सिद्धान्तों को बदल बैठे, इन दोनों में भी स्वेताम्बरों ने इतना साहस अवश्य दिखाया कि ब्राह्मणों की हजारों बातों को मानते हुए भी और लौकिक व्यवहार में जाति भेद को पूरी तरह स्वीकार करलेने पर भी इन्होंने शूद्रों के वास्ते आत्मीक कल्याण का उच्च मार्ग बन्द नहीं किया अर्थात् शूद्रोंके वास्ते भी साधु होनेकी स्वतन्त्रताको बराबर बनाये रक्खा परन्तु दिगाम्बरी लोग यहां तक नीचे गिरे कि छोटी जाति के लोगों को अपना आत्मा कल्याण करने अर्थात् साधु होनेसे भी रोकने लगे, इस अन्याय का ही यह फ़ल है कि दिगाम्बरों में एक भी साधु दिखाई नहीं देता है और गृहस्थियों को धर्म उपदेश मिलते रहने का मार्ग उठ गया है, इससे पहले

साधू लोग ही नगर २ और ग्राम ग्राम घूमकर संसारी लोगों के धर्म का उपदेश देते रहते थे और उनको धर्म मार्ग में लगाते रहते थे अब न साधू रहे न उपदेश रहा और न धर्म मार्ग रहा वल्कि मुट्ठीभर जैनी रह गये हैं जो भी नाममात्र के जैनी हैं और जिन के क़ायम रहने में भी संदेह है।

हिन्दू धर्म का रूप धारण करने से यद्यपि जैनियोंको अपने धर्मकी बड़ी २ अद्भुत कहानियां गढ़नीं पड़ी हैं परन्तु लाख बनावट करनेपर भी उसमें से असलियत की झलक बराबर आरही है और साफ ज़ाहिर हो रहा है कि जैनधर्म को जाति पांति के झगड़े से कोई सम्बन्ध नहीं है बल्कि "जाति पांति जाने ना कोय हरको भजे सो हर का होय" इस कहावत के अनुसार सबही मनुष्य धर्म पालन करते रहे हैं और मुनि बनकर स्वर्ग जाते रहे हैं, जैसा कि प्रसिद्ध दिगम्बर ग्रन्थ आराधनासार कथा कोष के अनुसार राजा अग्निदत्त ने अपनी ही बेटी कृत्तिका से भोग किया जिससे कार्तिकेय नामका पुत्र और वीरमती नाम की कन्या हुई, ऐसी सन्तान वास्तवमें म्लेच्छ, चांडाल और अस्पर्श शूद्रों से भी घटिया मानी जानी चाहिये तौ भी इस वीरमती कन्या का विवाह तो रोहेड़ नगर के राजा क्रौंचसे हुआ और कार्तिकेय नामका पुत्र मुनि होगया और स्वर्ग गया, और इस पृथवीपर ऐसा प्रसिद्ध और माननीय हुआ कि उसका मृत्यु स्थान कार्तिकेय तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है, इस ही प्रकार राजा उपश्रेणिक ने यमदंड भील की कन्या तिलकवती से विवाह किया जिस से चिलातपुत्र नाम का पुत्र हुआ जो मुनि हुआ और घोर तपश्चरण करके सर्वार्थ सिद्धि गया और वह उपश्रेणिक भी मुनि हुआ, इसही प्रकार सात्यकि नाम के एक दिगम्बर मुनिने ज्येष्ठा नाम की एक आर्यका से व्यभिचार किया और इस व्यभिचार से रुद्र नाम का जो पुत्र उत्पन्न हुआ वह भी मुनि हुआ १२०० विद्या देवियां जिसके आधीन हुईं, इसही प्रकार एक मल्लाह (धीवर) की कन्याको जिसका नाम कारण था एक अवधिज्ञानी मुनिमहाराज ने उसके पूर्व भवसुनाकर उसको दीक्षा दी और क्षुल्लिकिनी बनाया, इसही प्रकार नन्दग्वालेकी कन्या यशोदा भी आर्यका हुई।

इस प्रकार जब ऐसी नीच से नीच सन्तान भी मुनि होगई तब ऐसा कौन मनुष्य रह जाता है जो मुनि न होसके।

यद्यपि जैन कथा ग्रन्थों में बहुत कुछ गड़बड़ है और किसी में कुछ और किसी में कुछ कथा लिखी हुई है परन्तु इन उपरोक्त उदाहरणों से इतना अवश्य सिद्ध होता है कि जैन धर्म में सबही मनुष्यों को मुनि होने और ऊंचेसे ऊंचा धर्म पालने का ऐसा स्पष्ट अधिकार रहा है कि जिसको यह कथाकार भी नहीं छिपा सके हैं, इसके अलावा

जैनियों में भी जाति भेद के मानने और मनुष्यों को ऊंच नीच गिनने का भी जो कथन इन कथा ग्रन्थों में दिया गया है वह इतना थोड़ा और ऐसा अस्पष्ट और बेजोड़ है मानों ग्रन्थकार को ज़बरदस्ती ही लिखना पड़ा है जिससे वह बिल्कुल ही ओपरासा मालूम हो रहा है और यह ही जाहिर करता है कि इस को धर्म से कोई भी सम्बन्ध नहीं है, सबसे अधिक कथन इस विषय का आदिपुराण में ही मिलता है परन्तु वहां भी यह लिखा है कि भगवान ऋषभ देव ने भोग भूमि के समाप्त होने पर अपनी राज्यावस्था में ही लोगों को सर्व प्रकार के कर्म सिखाये और क्षत्री वैश्य और शूद्र इस प्रकार उन के तीन विभाग बताये, श्री भगवान उस समय आप्त नहीं थे क्योंकि आप्त वहही होता है जो सर्वज्ञ, वीतराग और हितोपदेशक हो, आप्त तो क्या उस समय तो वह मुनि भी नहीं थे बल्कि मामूली गृहस्थी थे इसही कारण तलवार चलाना आदि सर्व सांसारिक कार्य सिखा सके थे, इस हेतु न तो वह उस समय कोई धार्मिक मर्यादा स्थापित ही कर सके थे और न उन्होंने सर्वज्ञता प्राप्त करने से पहले कोई धर्म मर्यादा स्थापित ही कर सके थे और न उन्होंने सर्वज्ञता प्राप्त करनेसे पहले कोई धर्म मर्यादा स्थापित ही की, बल्कि सर्वज्ञ होने से पहले उन्होंने तो बहुत ज़रूरी अवसर पर भी धर्म उपदेश तक नहीं दिया, यह ही कारण था कि जो चार हज़ार राजा उनके साथ मुनि हुए थे वह धर्म से बिल्कुल अनजान रहजाने के कारण भ्रष्ट होगये और लोगों को आहार देने की विधि न मालूम होने के कारण श्री भगवान को छै महीने तक आहार के वास्ते घूमते हुवे भी आहार न मिलसका, यह सब कुछ हुआ परन्तु सर्वज्ञ होने और आप्त बन जाने से पहले श्री भगवान ने एक अक्षर भी धर्म के विषय में किसी को बताकर नहीं दिया और धर्म के विषय में कुछ बोलना अपने अधिकार से बाहर ही समझा।

आदिपुराण का यह भी कथन है कि भगवान ने तीन वर्ण बनाकर यह भी आज्ञा दी थी कि सब लोग अपने ही वर्ण का पेशा करते रहें जो इसके विरुद्ध करेगा वह राज्य से दंड पावेगा क्योंकि ऐसा होने से वर्ण शंकर होता है, इस से भी स्पष्ट सिद्ध है कि यह तीन भेद इस समय की जरूरत के वास्ते ही बनाये गये थे और धर्म से इनका कोई भी सम्बन्ध न था क्योंकि धर्म का ज़रा भी ध्यान रखने पर ऐसी कड़ी आज्ञा नहीं दी जा सकी थी कि तलवार पकड़ कर सिपाही बनने का कार्य दिया गया है वह और उसकी सन्तान सदा के लिये महान हिंसा का यह ही कार्य करती रहे जिसमें मनुष्यों के गले काटने पड़ते हैं और महा हिंसा के पेशे को छोड़ कर कोई दूसरा ऐसा पेशा

न कर सके जिससें ऐसी महान हिंसा न होती हो, राज्य की तरफ़ से ऐसी कड़ी आज्ञा तब ही दी जा सकती है, जबकि आज्ञा देनेवाले को आज्ञा देते समय धर्म का कुछ भी विचार न हो, देखो आजकल सबही पेशे करने की स्वतन्त्रता मिल जाने पर उन जैनियों ने भी फ़ौजमें भरती होने का पेशा छोड़ दिया है। जो क्षत्री की सन्तान हैं, और जर्मनी के साथ युद्ध में जाने से जैनियोंने यह ही कह कर इन्कार किया है, कि हम तो अहिंसा धर्म के पालनेवाले जैनी जो अपने हाथ से तो दूसरों का गला क्या काट सक्ते हैं। किन्तु हम तो ऐसा होता हुआ देख भी नहीं सक्ते हैं।

आदि पुराणसे यह बात स्पष्ट सिद्ध है, कि तीन वर्ण बनाये जानेसे पहले सब ही भोग भूमिया समान थे, उनमें अनादिकालसे ऐसा कोई प्राकृतिक भेद नहीं था, जैसा कि आम अमरूद आदि वृक्षों में वा कुत्ता बिल्ली आदि जीवों में है; तब यह तीन वर्ण बनाकर इनमें ऐसा प्राकृतिक भेद कौन पैदा कर सक्ता था जिससे उनही लोगों की सन्तान में मुनि होने की योग्यता होसके जिनको उच्च वर्ण दिया गया है, और शूद्रोंकी सन्तानमें लाखों करोड़ों पीढ़ी तक भी ऐसी योग्यता पैदा न हो सके, यदि यह कहा जावे कि श्री आदिनाथ भगवानने ही अपनी अलौकिक शक्ति से उन लोगों में से मुनि बनने की शक्ति निकाल ली थी और उनको मनुष्य न रखकर उनकी प्रकृतिही कुछ ऐसी बना दी थी जिससे उनकी सन्तान में भी कभी यह योग्यता न आसके तो ऐसा कहने से तो वस्तु स्वभावी जैनधर्म को बट्टा लगाना और श्रीतीर्थंकर भगवानको बदनाम करना है, इसके अलावा यदि उनकी ऐसी इच्छा होती भी तो जिस प्रकार उन्होंने यह आज्ञा दी थी कि अपने वर्ण का पेशा छोड़नेवाला दंड पावेगा तो वह इसही के साथ यह भी आज्ञा देते कि यदि कोई शूद्र धर्म के उच्च कार्य करेगा और मुनि बनेगा तो वह भी सज़ा पावेगा परन्तु ऐसी किसी आज्ञा का कोई कथन आदि पुराण में नहीं है, जिस से साफ़ मालूम होता है कि यदि किसी समय अलग २ वर्ण और जाति बनाई भी गई हैं तो उसको धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है।

यदि यह कहा जावे कि जब श्रीभगवान ने शूद्रों की प्रकृति ही ऐसी बदल दी थी कि वह और उनकी सन्तान उच्च धर्म पालन करनेके योग्य ही न हो सके तो फिर उन को इसके लिये दंड क़ायम करने की क्या ज़रूरत थी, तो इसमें यह विचारने की बात है, कि यदि उनमें मनुष्य की प्रकृति बदलने की ऐसी शक्ती होती तो वह पेशा बदलने के वास्ते भी क्यों राजकीय दंड कायम करते बल्कि तीनों वर्णवालों की प्रकृति ही ऐसी बना देते जिस से एक वर्ण का मनुष्य और उसकी सन्तान सदा के लिये दूसरा कोई पेशा कर ही न सके; जिस से आजकल भी वह नियम क़ायम रहता और

ऐसा घोर अंधकार न फैलता जैसा कि आजकल फैला हुआ है अर्थात् आजकल भी एकवर्ण वाला दूसरे वर्ण का पेशा न कर सका, परन्तु न तो श्रीभगवान् ऐसा कर सके थे और न उन्होंने ऐसा किया बल्कि जो भी रोक उस समय के प्रबन्ध के लिये करनी ज़रूरी थी उस की ही आज्ञा उन्होंने जारी की और उस ही के वास्ते विरुद्ध करने की अवस्था में दंड का विधान किया। यदि यह कहा जावे कि शूद्रों का पेशा ही ऐसा है जिस के कारण उन के इतने ऊंचे भाव हो ही नहीं सके हैं जिस से वह मुनि हो सकें तो इस के उत्तर में इतना ही कहना काफ़ी है कि पेशा तो फ़ौज के सिपाही का ऐसा है जिस के भाव महान् हिंसा रूप अर्थात् मनुष्यों के गले काटने के ही रहते हैं और मिहनत मज़दूरी करने वालों और कारीगरों में तो बहुत से ऐसे पेशे हैं जिस में हिंसा का सम्बन्ध ही नहीं होता है इस वास्ते पेशे की अपेक्षा तो क्षत्री ही मुनि बनने के सर्वथा अयोग्य होते हैं और बहुत प्रकार के शूद्र ही सर्वथा योग्य हो सके हैं, इस के अलावा यदि शूद्र का पेशा करने से ही मुनि होने की अयोग्यता आती है तो अब इस अंग्रेज़ी राज्य में तो बहुत से शूद्र अध्यापक बनकर ब्राह्मण का पेशा करने लगे हैं और फ़ौज में भरती होकर थानेदार वा तहसीलदार और डिप्टी मजिस्ट्रेट आदि होकर क्षत्री का काम करने लगे हैं और दूकानदारी, खेती और पशु पालन करके वैश्य का काम करने लगे हैं और बहुतों को तो यह उच्च पेशे करते हुए अनेक पीढ़ी बीत गई हैं तब इन को अवश्य ही उच्च धर्म पालन करने का अधिकार मिल जाना चाहिये और इस के विपरीत जो ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य शूद्रों का पेशा करने लगे हैं, उन से यह अधिकार छीन लेने चाहिये॥

आदि पुराण में यह भी लिखा है कि श्री आदिनाथ भगवान् ने विवाह के विषय में यह आज्ञा दी थी कि ब्राह्मण चारों वर्ण की कन्या से, क्षत्री अपने वर्ण की और वैश्य और शूद्र की कन्या से और वैश्य अपने वर्ण की और शूद्र की कन्या से विवाह कर सकता है परन्तु शूद्र केवल अपने ही वर्ण की कन्या से विवाह करे, विवाह के इस नियम से भी स्पष्ट सिद्ध है कि वर्ण का भेद केवल पेशे के वास्ते ही था, धर्म का इस से कोई भी सम्बन्ध नहीं था क्योंकि यदि एक शूद्र खेती करने लगे, वा दूकान खोल ले, वा सिपाही की नौकरी करले तब तो वर्ण शंकर होजावे और इसको रोकने के वास्ते भगवान ने राज्य का दंड भी नियत किया परन्तु इस बात की स्वयं ही आज्ञा दे दी कि ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य अर्थात् सब ही उच्च जाति के लोग शूद्र की कन्या से विवाह कर लेवें और ऐसा करने से न तो वर्ण शंकरता ही हो और न वह उच्च धर्म पालन करने से ही वंचित हों इस का साफ़ यह ही मतलब है कि वर्ण का केवल

पेशे से ही सम्बन्ध है, और पेशों में ही गड़बड़ पड़ने का नाम वर्ण शंकरता है, अन्य किसी भी बात से इस वर्णभेद का सम्बन्ध नहीं है इस कारण आज कल सब ही वर्णवालों को सब ही पेशों के करने की स्वतन्त्रता मिलजाने से पूरी २ वर्ण शंकरता हो गई है और वर्ण भेद बिल्कुल भी नहीं रहा है।

कथा ग्रन्थों में विवाह की इस उपरोक्त आज्ञा के अनुसार ऐसी तो सैकड़ों कथा मिलती हैं जिन में उच्च जातिवालों ने अपने से नीची जातिवालों और शूद्रों की कन्याओं से विवाह कर लिया है और ऐसा विवाह कर लेने से उन के वर्ण वा जाति में कोई भी फरक नहीं आया है बल्कि ऐसा विवाह करलेने वाले और उन की सन्तान मुनि होकर मोक्ष भी गई है, और कई तो ऐसे भी हुए हैं जिन्होंने वेश्याओं की भी कन्याओं से विवाह किया है और फिर भी वह दीक्षा लेने और मोक्ष जाने के अधिकारी रहे हैं जैसा कि सेठ चारुदत्त बारह वर्ष तक एक वेश्या के ही घर रहा फिर व्यापार को चला गया और फिर वापस आकर उस वेश्या को भी अपनी स्त्री बना लिया और फिर कुछ दिनों पीछे दिगम्बर मुनि हो गया, राजपुत्र नागकुमार ने पंच सुगन्धी नाम की वेश्या की दो कन्याओं से विवाह किया और फिर वह ही नागकुमार दिगम्बर मुनि हुआ और केवल ज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया।

कथा ग्रन्थों से यह भी पता लगता है कि श्री आदिनाथ भगवान् की यह आज्ञा भी बहुत दिनों तक क़ायम नहीं रही है कि कोई अपने से उच्च वर्ण की कन्या से विवाह न करे बल्कि इस के विपरीत भी होता रहा है और ऐसा होने से किसी प्रकार का कोई दोष पैदा नहीं हुआ है जैसा कि विश्वदेव ब्राह्मण की कन्या श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव को व्याही गई, कृष्ण के भाई गजकुमार का विवाह सोमशर्मा ब्राह्मणकी कन्या सोमा से हुआ और फिर वह ही गजकुमार दिगम्बर मुनि हुआ, राजा श्रेणिक का विवाह एक ब्राह्मण की कन्या से हुआ और इस विवाह से जो पुत्र हुआ वह दिगम्बर मुनि होकर मोक्ष गया, धनकीर्त्ति नाम एक वैश्य पुत्र के साथ महाराजा विश्वंभर ने अपनी पुत्री का विवाह किया, इस ही प्रकार की और भी अनेक कथाएं मिलती हैं। जिन से पता लगता है कि यदि आदि पुराणका यह कथन ठीक भी हो कि श्री आदिनाथ भगवान् ने अपने से उच्चवर्ण की कन्या से विवाह करने की मनाही की थी तो भी उन की यह आज्ञा ऐसी नहीं थी जो धार्मिक आज्ञा के समान अटल हो बल्कि उस ही समय के वास्ते एक प्रकार की सामान्य नीति थी जो आगामी काल में बिल्कुल नहीं मानी गई, और रोटी बेटी व्यवहार के लिये सब ही मनुष्य समान समझे गये अर्थात् चारों ही वर्णों में आपस में विवाह होता रहा और

इस प्रकार विवाह होने से धर्म कर्म में भी कुछ फ़रक़ नहीं आया।

जैन कथा ग्रन्थों से तो यह भी पता लगता है कि यद्यपि भील और म्लेच्छ लोग शूद्रोंसे भी घटिया समझे जाते थे परन्तु इन भीलों और म्लेच्छोंकी कन्याओं को विवाह लेने से भी उच्च वर्णवालों की जाति बिरादरी वा धर्म कर्म में कुछ फ़रक नहीं आया बल्कि इन भील और म्लेच्छ स्त्रियों से जो सन्तान उत्पन्न हुई वह भी उच्च मानी गई जैसा कि राजा उपश्रेणिकने जिस भील कन्यासे विवाह किया था उसका बेटा राजा हुआ और फिर दीक्षा लेकर मुनि हुआ और सर्वार्थ सिद्धि गया, श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव ने एक भील कन्या से विवाह किया जिस का पुत्र जरत्कुमार राजा बना और फिर मुनि हुआ इस ही जरत्कुमार का विवाह एक राजपुत्री से हुआ था जिसके पुत्र वसुध्वज को हरिवंशपुराण में हरिवंश का शिरोमणि लिखा है, इस ही प्रकार श्री आदिनाथ भगवान के बेटे भरत महाराज ने ३२ हज़ार म्लेच्छ कन्याओं से विवाह किया और ऐसा करने से न तो कोई वर्ण शंकर ही हुआ और न कोई और ही बिगाड़ पैदा हुआ बल्कि ऐसा कर लेने पर भी भरत महाराजने दीक्षा ली और उस ही भवसे मोक्ष गये, राजा सुमित्र ने भील कन्या वनमाला से विवाह किया फिर वह ही सुमित्र महा मुनि हुआ, राजा परासर की स्त्री धीवरराज की लड़की थी जिसका पुत्र व्यास हुआ, व्यास का पुत्र पांडु हुआ जिसके पांच पुत्र युधिष्टिर आदि पांडव हुये और पांचो ही मुनि हुये और उन में से तीन उसही भव से मोक्ष गये।

इस के अलावा भरत महाराज के द्वारा ब्राह्मण वर्ण बनाये जाने का जो कथन आदि पुराण और पद्म पुराण में लिखा है उससे भी यह ही सिद्ध होता है कि धर्म कर्म और रोटी बेटी व्यवहार के विषय में मनुष्यों में कोई भेद नहीं है, वर्णाश्रम का जो कुछ भी भेद उस समय में था वह केवल पेशे के वास्ते ही था, क्योंकि ब्राह्मण बनाने के वास्ते भरतने सब ही अनुव्रती श्रावकोंको बुलाया और अनुव्रती श्रावक शूद्र भी हो सक्ते हैं इस कारण उसने शूद्रों को भी बुलाया था और उनको भी ब्राह्मण बनाया था, आदि पुराण में तो इस विषय में साफ़ ही लिखा है कि ब्राह्मण वर्ण स्थापन करने का विचार आने पर भरत ने सब राजाओं को यह कहला भेजा कि तुम और तुम्हारे सदाचारी इष्ट मित्र और नौकर चाकर सब अलग आवें, (देखो आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ८, ९, १०) इन श्लोकों का यह कथन कि सदाचारी नौकर चाकर भी अलग २ आवें इस बात को साफ़ २ ज़ाहिर कर रहा है कि भरत महाराज ने शूद्रों को भी बुलाया था और उनमें से भी ब्राह्मण बनाये गये थे, बल्कि आदि पुराण को ध्यान के साथ पढ़ने से तो यह ही मालूम होता है कि बहुधा कर

शूद्र ही ब्राह्मण बनाये गये थे क्योंकि भरत ने यह सब लोग दान देने के वास्ते ही बु-लाये थे और आगामी को भी इनको दान मिलता रहने की प्रथा जारी की थी इस वास्ते बहुधा ग़रीब शूद्र ही वहां गये होंगे और वह ही ब्राह्मण बने होंगे, यह ही कारण है कि परम धर्मात्मा स्वयं भरत महाराज भी ब्राह्मण नहीं बने बल्कि छत्री ही रहे और इस ही प्रकार जिन जिन भी क्षत्रियों का कथन आदि पुराण में आया है वह सब क्षत्री ही रहे यद्यपि उनमें से बहुत से महान् धर्मात्मा और तद्भव मोक्षगामी भी थे ।

इसके अलावा आदि पुराण में यह भी लिखा है कि भरत महाराज ने अपने बनाये हुये ब्राह्मणों को उपदेश दिया था कि यदि कोई अपने उच्च वर्ण के घमंड में तुमसे कहने लगे कि तू तो अमुक का बेटा है और अमुक तेरी माता है इस कारण तेरी जाति वह ही है जो पहले थी और तेरा कुल भी वह ही है जो पहले था और तू भी वह ही है जो पहले था फिर तू अपने को बड़ा क्यों समझने लगा है तो तुम उसको यह जवाब देना कि श्री जिनेन्द्र देव ही हमारा पिता और ज्ञान ही हमारा निर्मल गर्भ है. सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूपी संसार जन्म से हम पैदा हुऐ हैं अर्थात् हम बिना योनि के पैदा हुये हैं, इस कारण देव हैं और हमारे समान जो कोई भी हो उन सबको ही तुम लोग ब्राह्मण समझो (देखो पर्व ३९ श्लोक १०८ से ११९ तक) आदिपुराणके इस कथन से यह ही सिद्ध नहीं है, कि बहुधा कर शूद्र ही ब्राह्मण बनाए गये थे, बल्कि इससे स्पष्ट शब्दोंमें यह भी सिद्ध होता है कि धर्म कर्म वा रोटी बेटी व्यवहार से इस बात का कोई भी सम्बंध नहीं है । कि वह मनुष्य किस जाति वा किस कुल का है, उसके माता पिता कौन हैं, और उसका जन्म कैसा है । बल्कि जो कोई भी श्री जिनेंद्र भगवान के बचनों को पाकर सम्यक्त ग्रहण कर लेता है वही ब्राह्मण है अर्थात् पूज्य है वह ही सब से उच्च है उसही को धर्म कर्म के सब अ-धिकार प्राप्त हैं । और सम्यक्त ग्रहण कर लेने से ब्राह्मण होजाने के कारण रोटी बेटी व्यवहार में भी वह ही सर्वोत्तम है ।

इसही अभिप्रायके स्पष्ट करने के वास्ते आदि पुराण के पर्व ३९ श्लोक १२६, १२७ १२८ में लिखा है कि भरत महाराज ने अपने बनाये हुए ब्राह्मणों को यह भी कहा, कि जाति का घमंड दूर करने के वास्ते उत्तम क्रियाओं के करने वाले ब्राह्मणों को मैं और भी समझाता हूं कि जो ब्रह्मा की सन्तान हो उसही को ब्राह्मण कहते हैं । और भ-गवान जिनेंद्र देवही ब्रह्मा हैं तुम उनका धर्म ग्रहण करने से उनकी सन्तान हो इस कारण तुम ब्राह्मण हो, भावार्थ भरत महाराज के इन शब्दों का यह ही है कि चाहे कोई आर्य हो म्लेच्छ, द्विज हो वा शूद्र जो कोई भी जिनेंद्र देव के धर्म पर चलता है वह

ही ब्राह्मण है फिर आगे चलकर भरत महाराज समझाते हैं, कि जिनेन्द्र के ज्ञान रूपी गर्भ से जन्म धारण किया है अर्थात् जिन्होंने जिनेन्द्र भगवान का धर्म ग्रहण कर लिया है, वह ही द्विज हैं और ऐसे द्विजों को किसी प्रकार भी अन्तःपाति अर्थात् वर्ण से गिरा हुआ नहीं समझना चाहिये (पर्व ३९ श्लोक १३०,१३१) फिर श्लोक १३२ में खोल कर ही कह दिया है कि जिसका आचरण ठीक है वह ही उत्तम वर्णवाला है, फिर इससे भी ज्यादा खोलने के लिये श्लोक १४१ में कहा है कि मनुष्य की शुद्धी और अशुद्धी उसके न्याय वा अन्याय रूपी चलन से ही माननी चाहिये अर्थात् जो न्याय रूप चलता है वह ही शुद्ध है और जो अन्याय रूप चलता है वही ही अशुद्ध है और दयारूप चलन को ही न्याय कहते हैं और हिंसारूप चलन ही अन्याय है, भावार्थ यह है कि मनुष्य की शुद्धी अशुद्धी किसी वर्ण वा जाति पर निर्भर नहीं है बल्कि उस के अहिंसा वा हिंसारूप चलन पर ही है आदिपुराण में इस विषय को बिल्कुल ही स्पष्ट कर देने के वास्ते इससे अगले श्लोक में साफ ही लिख दिया है कि सब ही जैनी नेक चलन होने से उत्तम वर्णवाले अर्थात् द्विज हैं, वह किसी प्रकार भी वर्ण अन्तः पाती अर्थात् वर्ण में गिरे हुये नहीं हैं बल्कि दया पालने के कारण जगत मान्य हैं। अर्थात शूद्र भी जैनी ही होजाने से उच्च वर्ण का द्विज होजाता है और हिंसा करता हुआ ब्राह्मण भी शूद्र ही है वर्ण वा जाति को धर्म कर्म वा रोटी बेटी व्यवहार से कोई सम्बंध नहीं है बल्कि वर्ण भेद केवल पेशे के वास्तेही था इसका स्पष्टीकारण आदिपुराण पर्व ३८ श्लोक ४५ से बहुत ही अच्छी तरह होजाता है जिसमें साफ़ लिखा है कि जाति नाम कर्म के उदय से उत्पन्न हुई मनुष्य जाति एक ही है, अर्थात् जन्म से सब ही मनुष्य बराबर हैं परन्तु चार पेशों के कारण वह चार प्रकार के अर्थात् वर्ण के होजाते हैं।

आदिपुराण में अन्य मती को जैनी बनाने की बिधि दीक्षान्वय क्रिया के नाम से पर्व ३९ में बहुत विस्तार के साथ लिखी है, और उसमें जैनी बनने के बाद उनको दिगम्बर मुनि होने का भी उपदेश दिया गया है, परन्तु यह कहीं नहीं लिखा कि वह अन्य मती किसी वर्ण का हो जिससे स्पष्ट सिद्ध है, कि मनुष्य मात्र ही जैन होकर मुनि होसक्ता है, इस पर यदि यह कहा जावे कि वह अन्य मती जिस वर्ण का था, उसही वर्ण का वह जैनी होने के पश्चात् भी रहैगा और अपने २ उच्च नीच वर्णानुसार ही धर्म क्रिया कर सकेगा तो इससे भी यह ही सिद्ध होता है कि वर्ण को धर्म से कुछ सम्बंध नहीं है किन्तु वर्ण सिर्फ पेशों के वास्ते ही है क्योंकि यदि वर्ण को धर्म से भी सम्बंध होता तो अन्य मतियों में भी यह चारों वर्ण कैसे हो सके और जो

वर्ण अन्यमती होने की अवस्था में था वह ही जैनी होने की अवस्था में भी कैसे रहता, इसके सिवाय आदिपुराण में तो साफ़ ही यह बात लिखदी है कि जैनी होने के पीछे वह अपना गोत और जाति आदि नाम बदल कर और अपनी स्त्री को भी जैनी बना कर और उससे जैन विधिके अनुसार दुबारा विवाह करके और जनेऊ पहनाकर और सच्चे गृहस्थीके समान धर्म क्रिया करने लगकर फिर पुराने जैनियोंसे वर्ण लाभकी प्रार्थना करै और वह लोग भी उसको यह कहकर वर्ण लाभ देवें कि आप जैसे लोगोंके न मिलनेपर ही हमको अपने समान रोज़गार करनेवाले मिथ्या दृष्टियोंके साथ वर्तना पड़ता था इस कारण हम तुमको खुशी से अपने में शामिल करते हैं, अर्थात् रोज़गार सम्बंध लेन देन अब तुमही से किया करेंगे, इससे भी स्पष्ट सिद्ध है कि वर्ण का कर्म धर्म वा रोटी बेटी व्यवहार से कोई सम्बंध नहीं है, बल्कि केवल पेशे से ही सम्बन्ध है; और वर्ण और जाति बदली भी जासक्ती है और आवश्यक्तानुसार अवश्य बदल देनी चाहिये, यहां तक कि ज़रूरत पड़े तो गोत्र भी बदल देना चाहिये।

पाठकगण! जैन ग्रंथोंके अनेक उदाहरणोंसे जब यह बात स्पष्ट है, कि उच्च जातिके अपने से नीच जातिकी कन्याओंको बराबर विवाहते रहते थे और शूद्र लोग भीलों और म्लेच्छों की भी सुन्दर कन्याओंको अपनी स्त्री बना लेते थे और उन स्त्रियों की सन्तान राजा भी बनती थी और तब इसमें तो कोई भी सन्देह बाकी नहीं रहता है कि इन चारों वर्णों का रोटी व्यवहार एक ही था क्योंकि जिस ने शूद्र वा भील म्लेच्छ की कन्या को अपनी स्त्री बना लिया और उस के उदर से पैदा हुई सन्तान को अपना पूरा अधिकार दिया उसका शूद्र वा भील म्लेच्छों से रोटी व्यवहार में क्या अन्तर रह गया और जब ऐसा पुरुष जाति बिरादरी वा धर्म कर्म में किसी प्रकार भी हीन नहीं समझा गया तो अन्य लोगों को भी शूद्रों और भील म्लेच्छों में रोटी व्यवहार में क्या अन्तर रह गया, और ऐसा कोई अन्तर रह कैसे सक्ता था जब कि आदिपुराण के कथनानुसार स्वयं श्री आदिनाथ भगवान ने यह आज्ञा देदी थी कि सब ही उच्च जाति वाले लोग अपने से नीच जाति की कन्याओं से विवाह करा सक्ते हैं, इस कारण चारों वर्णों का रोटी व्यवहार एक होने में तो कोई संदेह किसी प्रकार का हो ही नहीं सक्ता है, परन्तु इस विषय में यदि कोई प्रश्न उठ सक्ता है तो केवल यह ही हो सक्ता है कि छोटी जातिवालों को अपने से उच्च जातिवालों की कन्या से विवाह करने की मनाई क्यों की गई थी और उस का क्या अर्थ था, इस के उत्तर में निवेदन है कि अव्वल तो यह प्रथा कायम नहीं रही बल्कि नीची वर्ण वाले भी उच्च वर्ण की कन्याओं से विवाह करते रहे और थोड़ी बहुत जो कुछ भी यह प्रथा क़ायम रही थी

और जिस कारण यह प्रथा चली थी या चलाई गई थी उस का हेतु भी यह ही था कि पिछले समय में राजा लोग स्त्रियों का अधिक २ रेवड़ इकट्ठी करने लग गये थे और अधिक स्त्रियां इकट्ठी करने और अधिक बलवान समझे जाने के लिये वह अपने से निर्बलों की कन्याओं को जबर्दस्ती छीनने लगे थे और स्वयम्बर तक में युद्ध करने लग गये थे इस कारण उस समय में कन्या लेनेवाला बढ़िया और जिस की कन्या ली जावे वह घटिया समझा जाता था ऐसे समय में सब कोई अपनी कन्या को अपने से बड़े को ही देना चाहता था, अपने से घटिया को कन्या देकर कोई भी उस के मातहत होना पसन्द नहीं करता था, इस ही से यह प्रथा भी चल पड़ी कि उच्च वर्ण वाला अपनी कन्या अपने से छोटे वर्ण वाले को न देवे हिन्दुस्तान के इसही रिवाज़ को लेकर देहली के मुसलमान बादशाहों ने राजपूतों की कन्याओं को लिया परन्तु उन को अपनी कन्या नहीं दी, बल्कि अकबर, जहांगीर, और शाहजहां आदि बादशाहोंने तो अपनी कन्याओं का विवाह ही नहीं किया क्योंकि कोई हिन्दू वा मुसलमान जिस किसी को भी कन्या दी जावेगी उस ही को अपना सर्दार मानना पड़ेगा। इस कारण इन बादशाहों की कन्यायें सदा के लिये क्वारी ही रहीं, हिन्दुस्तान में जब यह वर्ण व्यवस्था ज़ोरों पर थी तब घटिया वर्ण वाले को उस से बढ़िया वर्णवाले पर अफ़सर भी नहीं बनाया जाता था और उच्च वर्णवाला अपने से घटिया वर्णवाले का मातहत रहना भी स्वीकार नहीं करता था इस कारण उस समय विवाह के वास्ते भी यह ही नियम उचित था कि उच्च वर्णवाला अपने घटिया वर्णवाले को कन्या न देवे, परन्तु आजकल तो घटिया वर्ण के अनेक हाकिम हैं जिन के मातहत ब्राह्मण क्षत्री आदि वर्ण के लोग काम कर रहे हैं ऐसी दशा में यदि कोई छोटे वर्ण का हाकिम अपने मातहत किसी उच्च वर्णवाले की कन्या को क़बूल करले तो कन्यावाले को अपना अहोभाग्य ही समझना चाहिये, दृष्टान्त रूप एक ब्राह्मण जो किसी करोडपति सेठ के यहां रोटी बनाने वा पानी पिलाने आदि किसी बहुत ही घटिया सेवा के काम पर नौकर है और रात दिन सेठ जी और उन के बड़े नौकरों के झिड़के खाने और उन की सर्व प्रकार की टहल करने को ही अपना अहोभाग्य समझ रहा है, ऐसे ब्राह्मण की कन्या को यदि उस सेठ का बेटा क़बूल करले तो यह ही समझना चाहिये कि उस ब्राह्मण ने अपनी कन्या अपने से बढ़िया को ही ब्याह दी।

इन सब बातों के सिवाय चौथे काल में बीच बीच में बहुत दिनों तक धर्म का बिल्कुल ही अभाव भी रहता रहा है और लाखों करोड़ों से भी बहुत ज़्यादा वर्षों तक

अभाव रहता रहा है, ऐसे समय में यह कभी सम्भव नहीं होसक्ता है कि वह वर्ण व्यवस्था क़ायम रही हो जिस की रक्षा के वास्ते भगवान आदिनाथ को राज्य का पहरा बैठाना पड़ा था अर्थात् व्यवस्था तोड़ने पर दंड क़ायम करना पड़ा था, इन समयों में तो अवश्य ही घोर अंधकार और पूरी पूरी गड़बड़ी होगई होगी, इस कारण यह कैसे माना जा सक्ता है कि इस समय जो ब्राह्मण हैं वह उनही ब्राह्मणों की सन्तान हैं जिन को भरत महाराज ने ब्राह्मण बनाया था और जो क्षत्री वा वैश्य हैं वह उनही क्षत्री और वैश्यों की सन्तान हैं जिन को श्री आदिनाथ भगवान ने क्षत्री वा वैश्य बनाया था, इस पंचम काल में ही जब कि धर्म का बिल्कुल अभाव नहीं हुआ है बहुत कुछ गड़बड़ दिखाई दे रही है और बहुत सी जातियों ने अपने वर्ण को बदल लिया है जैसा कि अग्रवाल ओसवाल और परवार आदि बहुत सी जातियां क्षत्री से वैश्य बन गई हैं इस ही प्रकार बहुत से ब्राह्मणों ने दान लेना त्याग कर खेतीका पेशा इख्तियार कर लिया है और तगा नाम की अपनी वैश्य जाति बनाली है और सब ही वर्ण वाले सब ही वर्णों का पेशा करने लगे हैं अर्थात् पूरा पूरा वर्णशंकर होगया है तब ऐसे समयों में जब कि धर्म का बिल्कुल ही अभाव होकर घोर अंधकार होगया था तब तो जो कुछ न हो गया हो वह ही थोड़ा है, इस कारण आजकल के ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रों को आदिनाथ भगवान के समय के ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रों की औलाद मानना बिल्कुल ही ज़बरदस्ती और सचाई के विरुद्ध है।

आदिपुराण के कथनानुसार श्री आदिनाथ भगवान ने भरत महाराज के स्वप्नों का फल बताते हुए क्षत्रियों की बाबत तो स्पष्ट शब्दों में ही कह दिया है कि पंचम काल में पुराने क्षत्रियों की नसल में से कोई भी न रहेगा, इससे सिद्ध है कि इस समय जो क्षत्री हैं वह उन क्षत्रियों की सन्तान नहीं हैं जिनको श्री आदिनाथ भगवान ने क्षत्री बनाया था, ऐसा ही अन्य वर्णवालों की बाबत् भी समझ लेना चाहिये, और आदिपुराण के कथनानुसार श्री आदिनाथ भगवान ने तो धर्म की बाबत भी यह ही कहा था कि पंचमकाल में यह जैन धर्म आर्य क्षेत्र में रहकर आसपास के म्लेछ देशों में ही चला जावेगा, इस प्रकार जब श्रीतीर्थंकर भगवान का ही ऐसा कहना है कि पंचम काल में इस जैनधर्म को म्लेछ लोग ही अंगीकार करेंगे और आर्यावर्त के श्रेष्ठ लोग छोड़ देंगे तब आर्यवर्त के रहनेवालों को यह कहने का क्या अधिकार है कि शूद्र वा भील म्लेछ आदि घटिया जाति के लोग धर्म की अमुक २ क्रियाओं को नहीं कर सकते हैं बल्कि आदिपुराण के इस कथन के अनुसार तो यदि म्लेछ लोग इन उत्तम वर्णवालों पर यह आपत्ति लावें कि तुम आजकल जैनधर्म पालन नहीं

कर सकते हो तो शायद कुछ ठिकाने की बात भी हो।

अब रहा रोटी बेटी का प्रश्न सो जब कि आजकल श्री आदिनाथ भगवान के समय के ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र ही नहीं रहे हैं बल्कि न मालूम किस किस समय में किस किस प्रकार और कौन कौन लोग ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र बनते रहे हैं तब रोटी बेटी व्यवहार के वास्ते भी पुराने वर्ण और जातिभेद की दुहाई मचाना व्यर्थ ही है, इस समय जब कि सब ही वर्ण के लोग सब ही वर्ण का पेशा करने लगे हैं जिसके कारण पूरा पूरा शंकरवर्ण हो चुका है और जब कि लोग पेशा तो कुछ करते हैं और अपना वर्ण कुछ और बताते हैं तब तो रोटी बेटी व्यवहार के वास्ते भी वर्ण भेद का कोई झगड़ा बाक़ी नहीं रहता है, इसके अतिरिक्त आजकल इस विषय में जैनियों का कोई एक बर्ताव भी नहीं है बल्कि आजकल तो जैन जाति इस विषय में अपने शास्त्रों के अनुसार तो बिल्कुल भी नहीं चल रही है और न अपने शास्त्रों के अनुसार चलने को तय्यार होती है बल्कि हिन्दुओं की ही पूरी पूरी रीस कर रही है। इसही कारण आजकल इस विषय में जिस २ प्रान्त में जो २ रीति हिन्दुओं में प्रचलित है उस उस प्रान्त के जैनी भी उन उन ही रीतियों पर चल रहे हैं और उस ही अपने प्रान्त की रीति को श्री भगवान की आज्ञा के समान मानते हैं बल्कि श्री तीर्थंकर भगवान की आज्ञा से भी अधिक मानते हैं क्योंकि आदिपुराण के अनुसार श्री तीर्थंकर भगवान की तो यह आज्ञा है कि उच्च वर्णवाला अपने से नीचे से वर्ण की भी कन्या से विवाह कर सक्ता है परन्तु आजकल तो ऐसा करनेवाले को जाति से बाहर करते हैं और उसका मुख भी देखना नहीं चाहते, बल्कि आजकल तो यदि कोई अपने ही वर्ण की किसी दूसरी जाति से विवाह करले तो उसको भी पतित ही समझते हैं जैसा कि यदि एक अग्रवाल खंडेलवालकी कन्यासे विवाह करले तो दोनों ही वैश्यवर्ण के होने से यद्यपि यह विवाह एक ही वर्ण में हुआ तो भी जाति भिन्न होने के कारण वह जाति से बाहर निकाल दिया जाता है और वह ऐसा भारी अपराधी समझा जाता है कि कोई भी छोटी बड़ी जाति उसको अपने में शामिल करने को राज़ी नहीं होती है मानो वह मनुष्य ही नहीं रहता है।

इसके अलावा खान पान में तो आजकल यह तमाशा हो रहा है कि जिस देश में हिन्दू लोग कचौरी पूरी आदि रसोई से बाहर खा लेते हैं उस देश के जैनी भी ऐसा ही कर लेते हैं और ऐसा करने से उनकी जाति में कुछ फ़रक़ नहीं आता है परन्तु जिस देश में हिन्दू लोग कचौरी पूरी भी चौके से बाहर नहीं खाते हैं वहां जैनी भी नहीं खाते हैं और यदि कोई खाने लगे तो वह जाति से भी पतित हो जाता है और

पूजा प्रक्षाल आदि धर्म कार्यों के करने के योग्य भी नहीं रहता है, इस ही प्रकार जिस देश के हिन्दू धीवर के हाथ का पानी पी लेते हैं और उनके हाथ की बनाई हुई साग भाजी और कचौरी पूरी खा लेते हैं उस देश के जैनी भी खा लेते हैं और जिस देश के हिन्दू नहीं खाते उस देश के जैनी भी उनके हाथ की छुई हुई कोई वस्तु खाना महा पाप समझते हैं गुजरात के हिन्दुओं में आपस के खान पान में अधिक छूत छात और खाना पानी वा वर्त्तन के जूठा होने का अधिक विचार नहीं है इस वास्ते वहां के जैनी भी इन बातों का विचार नहीं करते हैं, गरज कहां तक कहें, खान पान के मामले में तो आजकल के जैनियों का कोई सिद्धान्त ही नहीं है बल्कि जो कुछ है वह सब हिन्दुओं की ही रीस है।

इस प्रकार वर्ण और जातिभेद की बाबत पूरी पूरी जांच करने से यह फल निकलता है कि आजकल यह भेद न तो धर्म के ही अनुसार है और न कुछ लाभ ही पहुंचानेवाला है बल्कि बिलकुल ही हानिकारक और हिन्दुस्तान का नाश करनेवाला है और विशेष कर जैन धर्म के प्रचार को रोकनेवाला है, इस कारण प्रत्येक जैनी का यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वह इस भेदभाव को दूर करने की कोशिश करें और सब ही मनुष्यों को एक समान समझने का प्रचार करके मनुष्यमात्र की भलाई करने और सबही को धर्म मार्गपर लगाने का प्रयत्न करे और महान पुण्यका भागी बने।

॥ इति ॥
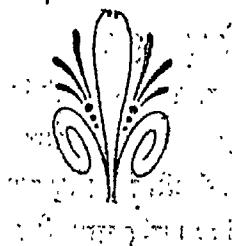
नवीन पुस्तकें !

श्रीपालचरित्र की समालोचना ।

यह पुस्तक अभी हाल ही में छपकर तैयार हुई है । लेखक—श्रीयुत वाड़ीलाल मोतीलाल शाह द्वारा सम्पादित 'जैन हितेच्छु, के गुजराती लेख से अनुवादित कराई है इस पुस्तक को एकवार अवश्य पढ़ना चाहिये । की० ≠) आना ।

आदिपुराण समीक्षा प्रथम भाग ।

लेखक—बा० सूरजभानु वकील । इसमें आदिपुराण की संक्षिप्त कथा लिखकर फिर उसकी समालोचना की गई है जो अवश्य द्रष्टव्य है । इसमें जिनसेनाचार्य की लेख शैली का नमूना है । कीमत ।) आना ।

आदिपुराण समीक्षा द्वितीय भाग ।

इसमें गुणभद्राचार्य की लेख शैली का नमूना है कीमत ।~) आना ।

हरिवंशपुराण समीक्षा ।

यह पुस्तक अभी हाल ही में छपकर तैयार हुई है । लेखक-बा० सूरजभानुजी वकील, इस पुस्तक में प्रथम हरिवंशपुराण की संक्षिप्त कथा लिखकर फिर उसकी समालोचना की गई है । सर्व धर्मप्रेमियों को एकवार अवश्य पढ़ना चाहिये । कीमत ।) आना ।

ब्राह्मणों की उत्पत्ति ।

आदिपुराण में जो ब्राह्मणों की उत्पत्ति लिखी है उस पर इस पुस्तक में विचार किया गया है तथा वर्णव्यवस्था पर विचार है । मनन करने योग्य बहुत उत्तम पुस्तक है की० ≠) आना ।

सत्योदय (मासिक पत्र)

इसके मुख्य लेखक जैन समाजके चिर परिचित सुयोग्य बा० सूरजभानुजी वकील देवबन्द हैं । और भी बड़े २ जैन तथा अन्य लेखकों के लेख इस में रहते हैं और अपने नाम के सदृश ही इसकी नीति है । जिसके लिये यह निर्भय होकर सदैव सत्य मार्ग का पूर्ण अनुयायी रहेगा । यदि आप जैनधर्म तथा समाज के विषय में नवीन विचार पढ़ने के इच्छुक हैं तो शीघ्र ही ग्राहक श्रेणी में नाम लिखाकर १॥~) की वी० पी० भेजने की आज्ञा दीजियेगा । अग्रिम वार्षिक मूल्य १॥) रु०

पता:—चन्द्रसेन जैन वैद्य, चन्द्राश्रम—इटावह ।

Printeb by G. D. L. Jain at the General Press, Etawah.